IJAER/ June-July 2012 /Volume-1/Issue-1/Article No-17/ 107-111 ISSN: 2278-9677

International Journal of Arts & Education Research

भारतीय संस्कृति पर मुगलकालीन हिन्दू

डॉ० धीरेन्द्र कुमार शर्मा
शोध निर्देशिक
हिन्दी विभाग
सी० एम० जे० विश्वविद्यालय
राय-भोई, जोरबाट
मेघालय।

हरी निवास
शोधार्थी
हिन्दी विभाग
सी० एम० जे० विश्वविद्यालय
राय-भोई, जोरबाट
मेघालय।

मध्यकालीन भारत में सामाजिक और आर्थिक जीवन में एक निरन्तरता बनी रही। सल्तनकालीन परिस्थितियों और मुगलकालीन परिस्थितियों में कोई मौलिक अन्तर नहीं था। केवल कुछ आंशिक परिवर्तन आये थे। मुगलकालीन सामाजिक और आर्थिक जीवन के सम्बन्ध में अधिक विस्तृत सूचनाएँ उपलब्ध हैं। नगरीय जीवन के सम्बन्ध में मुख्यतः यूरोपीय यात्रियों के वृतांत, व्यापारिक कम्पनियों के विपन्न, तथा ग्रामीण जीवन के सम्बन्ध में मुगल प्रशासनिक दस्तावेज इस सूचना की प्राप्ति में सहायक है।

सामाजिक जीवन

मुगलकालीन समाज की संरचना सल्तनतकाल से बहुत भिन्न नहीं थी, सिवाय इसके किइस काल में जैनों की स्थिति में कुछ परिवर्तन आये थे, सिक्ख एक नये और महत्वपूर्ण सम्प्रदाय के रूप में उभरे थे और ईसाईयों की संख्या भी बढ़ी थी। उन्हें मुगल दरबार में ज्यादा प्रभाव भी प्राप्त हुआ था। हिन्दू समाज में पूर्ववत जाति पर आधारित विभाजन बने रहे। भक्ति आन्दोलन के प्रभाव में जाति-प्रथा का खण्डन करने वाले सन्तों का पदार्पण भी हुआ। उनके द्वारा नए सम्प्रदायों की स्थापना भी हुई जिनके सदस्य जाति-प्रथा के सिद्धान्तों को नही मानते थे परन्तु इन सबका प्रभाव अत्यन्त सीमित रहा और जाति-प्रथा की जटिलता में कोई उल्लेखनीय कमी नही आयी। मुस्लिम समाज का स्वरूप भी पूर्ववत रहा। केवल विदेशी मुसलमानों में ईरानियों की संख्या और प्रभाव में उल्लेखनीय वृद्धि हुई। यह प्रक्रिया अकबर के समय में आरम्भ हुई। हब्शियों और अरबों का महत्व पूर्व काल की तुलना में बहुत कम हो गया। १८वीं शताब्दी तक मुगल सामन्तों में दो वर्ग ही मुख्य रूप से महत्वपूर्ण रह गये थे। ये थे भारतीय मुसलमान और तूरानी। इस काल की दरबारी गुटबंदियों और षडयंत्रों में इन दोनो की भूमिका विशेष महत्व रखती है।

समाज में महिलाओं की स्थिति पहले की तुलना में सुधरी थी। मुगल काल में अनेक विदुषी और प्रभावशाली महिलाओं की चर्चा मिलती है, जो हिन्दु और मुस्लिम दोनो ही वर्गो से सम्बन्धित थीं। जैसे जहाँआरा, नूरजहाँ, गुलबदन बेगम, चाँदबीबी, दुर्गावती और ताराबाई परन्तु सामान्यतः महिलाओं को अनेक असुविधाओं का सामना करना पड़ता था, जैसे पर्दा प्रथा, बहु-विवाह, बाल-विवाह, सती प्रथा, बाल-हत्या आदि। अकबर द्वारा समाजिक सुधारों के प्रयास किये गए। उसने स्त्री शिक्षा को प्रोत्साहन दिया। बहुविवाह एवं सती का प्रचलन रोका और विवाह के लिए निम्नतम आयु निर्धारित करने के आदेश दिये। परन्तु ये प्रयास बहुत सफल सिद्ध नहीं हुए।

दूसरी ओर दासों की स्थिति में सल्तनकाल की तुलना में गिरावट आयी। दासों को अब मात्र सेवक के रूप में अथवा घरेलू काम-काज के सहायक के रूप में प्रयोग किया जाने लगा। उन्हें प्रशासनिक अथवा सैनिक पदों पर नियुक्ति वस्तुतः बन्द हो गयी। स्वाभाविक रूप से समाज में उनकी स्थिति में गिरावट आयी।

मुगलकाल में शिक्षा के क्षेत्र में विशेष प्रगति हुई। सबसे महत्वपूर्ण परिवर्तन यह आया कि मदरसों के पाठ्यक्रम में धर्मतिरिक्त विषयों, जैसे गणित, दर्शन, साहित्य आदि का महत्व बढ़ा। इसी के साथ गैर मुस्लिमों द्वारा फारसी शिक्षा के प्रति अधिक अभिरूचि दिखायी गयी। इसके दो कारण थे। एक तो हिन्दुओं को प्रशासनिक पदों पर काफी संख्या में नियुक्तियाँ मिलने लगी थीं और इनके लिए फारसी शिक्षा इन नौकरियों की प्राप्ति के लिए अनिवार्य थी क्योंकि फारसी ही प्रशासनिक कार्यों की भाषा थी। दूसरे पाठ्यक्रम में धर्मतिरिक्त विषयों का महत्व बढने के कारण गैर-मुस्लिम के लिए भी अब यह शिक्षा पद्धति अधिक उपयोगी बन गयी थी। यह परिवर्तन लोदी काल से ही आरम्भ हो गये थे, मगर इनका परिपक्व रूप मुगलकाल में ही प्रस्तुत हुआ। इसी के साथ-साथ हिन्दु और मुस्लिम समाज में शिक्षा का परम्परागत रूप भी पूर्ववत बना रहा।

हिन्दू और मुस्लिम समाज के बीच सम्पर्क से एक मिली-जुली परम्परा का आरम्भ हुआ। रहन-सहन के ढंग, खान-पान, वेश-भूषा, त्यौहार एवं उत्सव आदि में एक मिली-जुली परम्परा विकसित हुई। मुगलकाल में इस समन्वयवाद का दरबारी जीवन से भी घनिष्ठ सम्पर्क रहा। अकबर द्वारा राजपूत शासकों के प्रति मैत्रीपूर्ण नीति अपनाने और वैवाहिक सम्बन्धों की स्थापना से शासक वर्ग के जीवन

में भी समन्वय आया और मुगल दरबार के रीति-रिवाज पर राजपूत परम्परा का प्रभाव पड़ा। बाद में मुगल परम्पराओं ने राजपूतों के दरबारी जीवन को भी प्रभावित किया।

मुगलकालीन वेशभूषा

विभिन्न वर्गो के लोगो की वेशभूषा आर्थिक स्थिति के अनुसार निर्धारित थी। अध्ययन की सुविधा के लिए इन्हें हम मुख्यतः दो वर्गो में विभाजित कर सकते है- पहला उच्च वर्ग जिसमें शासक एवं अमीर वर्ग के लोग थे, दूसरे निम्न वर्ग जिसे दूसरे शब्दों में हम साधारण वर्ग भी कह सकते है, जिसमें किसान, मजदूर, कारीगर और दास थे।

मुगल सम्राट अपनी नयी पोशाकों के प्रति काफी जागरूक थे। उन्होनें कई नई पोशाकों का आविष्कार किया। सम्राट हुमायूँ ने लबादे के एक नये स्वरूप का आविष्कार किया जो कमर से कटा होता था। और सामने खुला रहता था। हुमायूँ इसे ज्योतिष विज्ञान की अपनी रूचि के अनुसार कई रंगो में काबा से ऊपर पहनता था। यह कोट कई अवसरों पर अमीरों एवं अन्य लोगों को खिलअत के रूप में प्रदान किया जाता था हुमायूँ के सन्दर्भ में एक अन्य परिधान इलबग्चा है जो एक प्रकार का ढीला कोट है। सम्राट अकबर की वस्त्रों में अत्यधिक रूचि थी इसके लिए उसने कुशल दर्जियों की नियुक्ति की, जिन्होंने उसके दरबार में लगे कपडों में सुधार किया। अबुल फजल ने आइन-ए-अकबरी में ग्यारह प्रकार के कोट का उल्लेख किया है। तकौचिया, पेशवाज, शाहअजीदा, गदर, काबा इत्यादि। चकमन तथा फरगुल का प्रयोग बरसाती कोट के रूप में किया जाता था। फरगुल एक प्रकार का रोएदार कोट था जिसका उपयोग शीतकाल में किया जाता था, हुमायूँ ने सर्वप्रथम इसका प्रयोग किया था।

अकबर भी नक्षत्रों के अनुसार वस्त्र धारण करता था। वह हिन्दुओं की तरह धोती भी पहनता था जिसके चुनट किया हुए निचले भाग में मोती जडे रहते थे फदर रूडोल्फ ने अकबर को सर्वप्रथम सिल्क काली धोती पहने हुये देखा। मान्सरेट ने अकबर की पोशाक के विषय में लिखा है- 'जहाँपनाह सिल्क के कपड़े पहनते थे जिस पर सोने की कढायी हुयी रहती थी। जहाँपनाह का लबादा उनके जूतों तक रहता था और उनकी एडियॉ तक ढकी रहती थी वह मोतियों एवं सोने के आभूषण पहने रहते थे अपने पिता की भॉति जहागीर भी वस्त्रों में रूचि रखता था। वह कलंगीदार पगड़ी धारण करता था। वह हीरे जवाहरात जडित जंजीर गले में पहनता था उसके वस्त्रों में भी हीरा मोती तथा अन्य रत्न जड़े रहते थे। जहाँगीर के आदेशानुसार कोई भी उसके वस्त्रों का अनुकरण नहीं कर सकता था, केवल सम्राट द्वारा उपहार में दिये गये उसी प्रकार के वस्त्र अमीर धारण कर सकते थे। शाहजहाँ को भी वस्त्रों में विशेष रूचि थी। वह मुगलो के वैभव और शान-शौकत के अनुरूप वस्त्र धारण करता था। औरंगजेब जो कि एक कट्टरपंथी सप्राट था साधारण वस्त्र पहनता ळाा। रात्रि के लिए भिन्न वस्त्र होते थे।'

मुगलकालीन खानपान

मुगलकाल में शासक वर्ग के लिए भोजन की विशेष व्यवस्था होती थी। मुगल सम्राटों तथा अमीरों को भारतीय फल तथा मिठाइयॉ काफी पसन्द थी। आगरा बाजार में सुगन्धित मिठाइयों की खूब बिक्री होती थी। अमीर प्रायः प्रीतिभोज का आयोजन करते रहते थे एक अतिथि को लगभग बीस प्रकार के पकवान परोसे जाते थे। मुगलकाल में मॉस खाने का कम शौक था। मुगल गद्दी को पुनः प्राप्त करने से पहले हुमायूँ ने मॉस खाना छोड़ दिया था। अकबर की मॉस खाने में ज्यादा रूचि नहीं थी। वह कभी-कभी मॉस खाता था। बदायूँनी के अनुसार सम्राट ने मॉस के साथ-साथ लहसुन तथा प्याज खाना भी बन्द कर दिया था। जहॉगीर ने रविवार तथा गुरूवार तथा गुरूवार को पशुओं के वध पर प्रतिबन्ध लगा दिया था। जहॉगीर को गुजराती तरीके से बनायी गयी खिचड़ी पसन्द थी। अबुल फजल ने आइन-ए-अकबरी में विभिन्न सब्जियों, मॉसाहारी व्यंजनों एवं मिठाइयों की लम्बी सूची दी है। मुस्लिम उच्च वर्ग के लोग चावल से काबुली दुज्यबिरियान, कीमा पुलाव एवं अन्य व्यंजन बनाते थे, जिसमें मक्खन एवं काली मिर्च मिलाते थे। मिष्ठान में हलवा, मिठाई, जलेबी आदि चीजें उत्तम प्रकार की चीनी एवं फलूदा से बनायी जाती थी। आसफ खान द्वारा सर टामसरों के स्वागत में दिए गए भोज के वर्णन से शाही व्यंजन का पता चलता है।

भारत के जिन क्षेत्रों में धान प्रमुख फसल थी वहॉ के ग्रामीण लोगों का मुख्य भोजन चावल था। बंगाल, उड़ीसा, कश्मीर, असम तथा दक्षिण भारत धान की फसल के प्रमुख क्षेत्र थे। इसी तरह राजस्थान और गुजरात में ज्वार और बाजरा की फसल ज्यादा होने के कारण यहॉ के ग्रामीण लोगों का प्रमुख भोजन ज्वार और बाजरा से निर्मित खाद्य पदार्थ था। इसी प्रकार कश्मीर में एक निम्न श्रेणी का चावल साधारण वर्ग का सामान्य भोजन था। बिहार के किसानों का मुख्य आहार मटर के आकार के अन्न पर निर्भर था, जिसे 'किसारी' कहा जाता था। गुजरातियों को चावल एवं दही बहुत पसन्द था। जहॉगीर ने उल्लेख किया है कि कश्मीरी लोगों का मुख्य भोजन उबला चावल एवं उबली हुई नमक मिश्रित सब्जी थी।

आम आदमी के लिए खिचड़ी सर्वाधिक पसंदीदा भोजन था। बंगाल और उड़ीसा के तटवर्ती क्षेत्रों में मछली काफी चाव से खायी जाती थी। अनाज के साथ-साथ दूसरी साग-सब्जियों का प्रयोग भी होता था। फ्रांसीसी यात्री ट्रेवनियर के अनुसार सेम तथा दूसरी सब्जियॉ प्रायः छोटे से छोटे गॉव में भी बिकती हुई देखी जा सकती थी। हिन्दू मुख्य रूप से शाकाहारी थे जो दाल, दही, मक्खन, तेल, दूध एवं दूध से निर्मित अन्य उत्पाद प्रयोग करते थे। वे चावल के विभिन्न व्यंजन बनाते थे। उत्तर भारत में सामान्य लोग सामान्यतः

ज्वार, बाजरा और कभी-कभी गेंहूँ की चपातियों को खाने में प्रयोग करते थे। गॉव के निर्धन लोगों को उबले चावल और मोटे अनाज पर ही निर्भर रहना पड़ता था। अधिकांशतः ग्रामीण जनसंख्या ज्यादातर दिन में केवल एक बार ही नियमित भोजन करती थी। साधारण रूप से यह सुबह या दोपहर में होता था।

सौन्दर्य प्रसाधन, श्रंगार एवं आभूषण

प्राचीन काल से ही भारतीयों को सौन्दर्य प्रसाधान सम्बन्धी विधियों जैसे बाल रंगने की विधि, गंजेपन को दूर करने की दवा और शराब से बाल साफ करने के लिए लगाए जाने वाले पदार्थों का ज्ञान था। मुगल काल में भी इन सब का खूब प्रचलन रहा। दाढ़ी पर कंघी करना और इत्र लगाना तथा बहुमूल्य पोशाकें पहनना सम्मान और कुलीनता के द्योतक माने जाते थे। आधुनिक साबुन, पाउडर और क्रीम की जगह घूसल, उपताना और चन्दन का लेप तथा विभिन्न प्रकार के मूल्यवान इत्र प्रयोग में लाए जाते थे।

हिन्दुस्तानी स्त्री के लिए सुहाग या वैवाहिक जीवन का मतलब अपने शरीर पर आभूषणों का प्रयोग थ। इसमें कुलीनता एवं प्रदर्शन की भावना भी निहित थी। हिन्दू स्त्री केवल विधवा होने की अवस्था में ही बह अपने आभूषणों एवं जवाहरातों का त्याग करती थी तथा अपने सिर से सुहाग की निशानी के रूप में लगाया जाने वाला सिन्दूर भी मिटा देती थी।

मुगलकालीन आवास

मुगलकालीन राजमहल सामान्यतः नदियों के किनारे बने होते थे। कुछ महल तो पथरीली चट्टानों पर बने होते थे। जिसके चारों ओर कृत्रिम झील हुआ करती थी। सम्भवतः मुगलों ने हिन्दू शहरों के विशिष्ट तत्व, अर्थात् महलों में सरोवर, मन्दिर, चौड़ा और खुला स्थान और उनकी इमारतों की ऊँचाई और सौष्ठव में कुछ अपने विशिष्ट तत्व जोड़े और इस प्रकार मुगलकालीन नगरों का स्वरूप विकसित हुआ। इन महलों के दो भाग होते थे- बाह्य और आन्तरिक। भीतरी हिस्से में रानियों एवं राजकुमारियों के कक्ष, व्यक्तिगत सभागार, मनोरंजन कक्ष, स्नानागृह आदि होते थे जबकि दूसरे भाग में दीवान-ए-आम, दीवान-ए-खास, भण्डारग्रह आदि होते थे।

शाही महत्व की एक विशेषता घड़ियाल का प्रयोग तथा घण्टों की घोषणा थी। हुमायूँ में चन्द्रमास की पहली और चौदहवीं तिथि को दिन में कई बार जैसे उषाकाल में, सूर्योदय के पश्चात्, सूर्यास्त के समय और रात में ढ़ोल की ध्वनि से समय की घोषणा करने की पद्धति प्रारम्भ की। उसे उत्तराधिकारी अकबर ने घड़ियाल की प्राचीन पद्धति अपना ली, और जहॉ भी सम्राट का तम्बू जाता घण्टा और घड़ियाल उसके साथ चलते थे। राजधानी के बाहर शिकार एवं क्रीड़ा यात्रा या सरकारी दौरों के लिए अनेक प्रकार के तम्बुओं का प्रयोग किया जाता था। मुगल सम्राट हुमायूँ ने अनेक प्रकार के छोटे तथा बड़े शामियानों और तम्बुओं के आकार निर्धारित कर दिए, जो सम्राट की कुशलता एवं रूचि को प्रदर्शित करता है। हुमायूँ ने एक शामियाना इतना बड़ा बनवाया कि उसे खड़ा करने हेतु खम्भों के लिए अनेक ढ़ॉचों की आवश्यकता होती थी।

गॉवों में समृद्ध जमींदार एक साथ कई झोपड़ीनुमा मकान बनाते थे। ये मकान हवादार एवं भण्डारण क्षमता के अनुरूप होते थे। उनमें से कुछ मकान दो मंजिले थे तथा उन पर सुन्दर टैरिस भी थे। इन मकानों की विशेष बात यह थी कि इनमें प्रत्येक मंजिल के ऊपर छज्जे की भी व्यवस्था थी जो छायादार एवं हवादार रहता था तथा गर्मियों में मकान को ठण्डा रखने में सहायक होता था। गरीबों के मकान फूस की झोपड़ियॉ हुआ करती थीं जिसमें न कोई खिड़की होती थी और न कोई कमरा। अनाज रखने के लिए कुछ बन्दोबस्त करना एक अन्य झोपड़ी का निर्माण करने जैसा था। इन झोपड़ियों में हवा के लिए सिर्फ एक दरवाजा था, यह हवा, प्रकाश एवं प्रवेश के लिए एकमात्र रास्ता था। इन मकानों के फर्श को गाय के गोबर से लीपा जाता था। इन झोपड़ियों में सोने के लिए एक चटाई होती थी और चावल रखने के लिए एक गड्ढ़ा होता था। भोजन पकाने के लिए एक या दो बर्तन होते थे।

मुगलकालीन त्यौहार एवं उत्सव

मुगलकाल में हिन्दू और मुसलमान दोनों ही समुदायों के लोग अपने-अपने त्यौहार बड़े उत्साह के साथ मनाया करते थे। पूरे देश में इनके मनाने में एकरूपता थी, परन्तु स्थानीय तथा भौगोलिक परिस्थितियों का प्रभाव उन पर पड़ता था। ये स्थान-स्थान पर मामूली अन्तर के साथ पाये जाते थे तथा इनकी प्रसिद्धि में भी स्थान विशेष पर अन्तर था। साज-सज्जा प्रकाश की व्यवस्था, पटाखे, सुन्दर जुलूस, सोने-चॉदी, हीरे-मोती आदि के आभूषणों का प्रदर्शन भारतीय मुसलमानों के त्यौहारों के आवश्यक अंग थे जोकि हिन्दू संस्कृति के प्रभाव का द्योतक था। अकबर एवं जहॉगीर ने कुछ हिन्दू त्यौहारों को अपनाया एवं उन्हें राजदरबार के कैलेण्डर में स्थान दिया। हुमायूँ ने तुलादान को स्वीकार किया। अकबर ने होली, दशहरा एवं बसन्त पन्चमी को खूब ढंग से मनाया तथा जहॉगीर एवं शाहजहॉ ने इस प्रथा को कायम रखा। औरगंजेब ने अधिकांश हिन्दू एवं फारसी त्यौहारों को राजदरबार में प्रतिबन्धित कर दिया।

होली हिन्दुओं के सभी वर्गों का सबसे लोकप्रिय त्यौहार था। होली फागुन माह में मनाई जाती थी। यह तीन दिन तक चलने वाला त्यौहार था। होलिका दहन के दिन सभी लोग विशेष स्थान पर अग्नि जलाते तथा उसके चारों ओर एकत्र हो जाते थे। होलिका दहन के दूसरे दिन सभी लोग रंगीन जल तथा गुलाल से होली खेलते थे। मुगल काल के यूरोपीय यात्रियों ने इस त्यौहार का विस्तृत

उल्लेख किया है। इस दिन सभी वर्गों एवं जातियों के लोग नाच-गाने के साथ इस त्यौहार को मनाते थे। आज ही की तरह होली उस समय सर्वाधिक प्रसिद्ध त्यौहार था।

मुगलकालीनसामाजिक आचार-व्यवहार

हिन्दू एवं मुसलमान भिन्न-भिन्न तरीके से मित्रों, सम्बन्धियों एवं बड़ों का स्वागत करते थे। मनूची लिखता है कि मुगलकाल में हिन्दू पॉच प्रकार से प्रणाम करते थे। अपने समान आयु के लोगों के बीच राम-राम कहने की प्रथा थी। एक उच्च पदस्थ व्यक्ति जैसे गर्वनर, मन्त्री या सेनानायक का स्वागत दोनों हाथ जोड़कर सिर के ऊपर उठाकर किया जाता था। छोटे लोग बड़ों का सम्मान झुककर एवं पैर छूकर करते थे। लोग अपने गुरूओं के सामने सीधे लेटकर उन्हें सम्मान देते थे। राजा भी इसी प्रकार का सम्मान पाता था। ब्राह्मणों को छोड़कर सभी वर्गों के लोग राजा के सामने साष्टांग लेटकर उन्हें सम्मान देते थे। ब्राह्मण लोग सिर्फ हाथ जोड़कर उसे सिर से ऊपर उठाकर सम्मान देते थे। सिख धर्म के प्रवर्तक गुरूनानक के विषय में प्रचलित हैं कि उन्होंने अपने शिष्यों से प्रणाम का उत्तर 'सत-करतार' कहकर देने का कहा था।

मुस्लिम समुदाय के सभी वर्गों के लोग एक दूसरे का अभिवादन 'सलाम' कहकर देते थे। लोग एक-दूसरे का स्वागत 'अल-सलाम आलेकुम' कहकर करते थे। इसके प्रति उत्तर में सामने वाला व्यक्ति 'वा-लेकुम अल सलाम' कहता था। मित्रों में एक दूसरे का स्वागत अपने दाहिने हाथ को मस्तक तक उठाकर एवं शरीर के सामने झुकाकर किया जाता था। अबुल फजल में 'कुर्निश' तथा 'तस्लीम' का बादशाह के स्वागत में कहे जाने वाले शब्दों के रूप में उल्लेख किया है। 'कुर्निश' में दाहिने हाथ की हथेली को मस्तक पर रखकर सिर को झूकाया जाता था। तस्लीम कहते समय व्यक्ति अपने दाहिने हाथ के पश्य भाग को जमीन पर रखकर धीरे-धीरे उठते हुए सीधे खड़े होकर हथेली को सिर पर रख लेता था। जमीन से उठते समय हाथ को सीने पर भी रखने की प्रथा थी। इसके बाद ही उसे सिर तक लाया जाता था। अकबर ने एक आदेश पारित किया था कि तस्लीम को तीन बार कहा जायं। अकबर ने एक अन्य प्रकार के अभिवादन करने के ढंग का प्रचलन किया जिसे 'सिजदा' कहा जाता था। इसमें बादशाह के सम्मुख सीधे लेटने की प्रथा थी। परन्तु कुछ रूढ़िवादी कठमुल्लाओं द्वारा यह कहकर इस प्रथा का विरोध किया गया कि यह मानव द्वारा मानव की पूजा है। फलस्वरूप अकबर ने दरबार-ए-आम में इस पर रोक लगा दी तथा व्यक्तिगत गोष्ठियों में इसकी अनुमति दे दी। यह प्रथा शाहजहॉ के शासनकाल में समाप्त हो गयी। शाहजहॉ ने इसके स्थान पर 'जमीबोंस' का प्रचलन किया जिसमें जमीन को चूमने की प्रथा थी। कुछ समय बाद इस प्रथा का भी त्याग कर दिया गया तथा परम्परागत 'तस्लीम' को कुछ परिवर्तनों के साथ पुनः अपना लिया गया। अब इसे चार बार से कम नहीं कहा जाता था।

मुगलकाल में ग्रामीण आर्थिक जीवन

मुगल साम्राज्य में आर्थिक जीवन का अध्ययन मुख्यतः दो स्तरों पर किया जा सकता है, ग्रामीण और नगरीय। ग्रामीण अर्थ व्यवस्था में कृषि की प्रधानता पूर्ववत बनी रही, जबकि नगरीय जीवन में व्यापार और शिल्प-उत्पादन की स्थिति पहले की तुलना में अधिक समुन्नत रही। सबसे बढ़कर यूरोपीय व्यापार का मार्ग प्रशस्त हुआ और विभिन्न यूरोपीय व्यापारी कम्पनियों ने भारत में अपने क्रिया-कलाप आरम्भ किए। मुद्रा प्रणाली भी अधिक सुसंगठित बनी और बैंकिंग एवं बीमाकरण आदि की दिशा में भी उल्लेखनीय प्रगति हुई। इन परिवर्तनों के बावजूद मुगलकालीन अर्थ-व्यवस्था का स्वरूप कृषि-प्रधान ही रहा और राज्य की आमदनी का सबसे महत्वपूर्ण स्रोत लगान या भू-राजस्व ही रहा।

मुगलकालीनराजस्व-व्यवस्था

मुगल साम्राज्य की पुर्नस्थापना के बाद ही अकबर ने राजस्व प्रणाली को सुव्यवस्थित रूप देने के उपाय किए। इस क्रम में उसने विभिन्न प्रयोग किए और अन्ततः शेरशाह द्वारा विकसित लगान-व्यवस्था को कुछ सुधारों के साथ ग्रहण किया। अकबर की इसी व्यवस्था का प्रचलन उसके उत्तराधिकारियों ने भी जारी रखा।

मुगलकाल में भू-राजस्व को माल अथवा खराज कहते थे। इसका स्वरूप कृषि-सम्बन्धी कर का था जो विभिन्न फसलों के आधार पर वसूल किया जाता था। राज्य की आमदनी का यही मुख्य स्रोत था। इसका निर्धारण और वसूली रबी और खरीफ की फसलों पर अलग-अलग किया जाता था। इस व्यवस्था का मूल आधार शेरशाह द्वारा विकसित प्रणाली पर आधारित था। शेरशाह ने अपने शासनकाल में एक योग्य एवं कार्यकुशल राजस्व प्रणाली का विकास किया था जो मापन पर आधारित थी। इसके अन्तर्गत कृषि योग्य भूमि की माप के आधार पर लगान का निर्धारण किया जाता था। इसके अतिरिक्त शेरशाह ने किसान को पट्टा देने और उससे कबूलियत लेने के उपाय किए जिससे राज्य और किसान के बीच प्रत्यक्ष सम्बन्ध स्थापित हुए और जागीरदारों एवं जमींदारों की स्थिति कमजोर पड़ी। शेरशाह ने लगान के निर्धारध के लिए भूमि के वर्गीकरण के आदेश दिए थे। भूमि को उपज के आधार पर तीन श्रेणियों- उत्तम, मध्यम एवं निम्न में विभाजित कर तीनों की औसत उपज का ऑकलन करके इसका १/३ अंश लगान के रूप में निर्धारित किया जाता था। लगान की यही दर 'रै' कहलाती थी। नगद वसूली की स्थिति में इसी 'रै' का अनाज के प्रचलित मूल्यों के आधार पर

नगद-दरों में परिवर्तन कर लिया जाता था। यह नगद दरें 'दस्तूर' कहलाती थीं। उसने लगान की नगद अदायगी को लोकप्रिय बनाया और किसान की सुविधा के लिए 'तकावी' ऋण का प्रचलन भी किया।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1- **एजाज़, आर.** (१९८७) 'इम्प्रूव इम्प्लीमेन्टेशन ऑफ इन्टीग्रेटेड डैवलेपमेन्ट सर्विसेज योजना'।

2- **भटनागर सुरेश**(२००६) भारत में शिक्षा व्यवस्था का विकास, मेरठ, आर०लाल०बुकडिपो।

3- **एन०आई०आर०डी०**(१९९९)'इण्डिया रूरल डेवलेपमेन्ट रिपोर्ट', राष्ट्रीय ग्रामीण विकास संस्थान,हैदराबाद।

4- **भारत सरकार**(२००२) इण्डिया एनुअल, सूचना एवं जनसंचार मन्त्रालय, नई दिल्ली।

5- **भारत सरकार**(२००२)इकॉनोमिक सर्वे, भारत सरकार, दिल्ली।